अध्याय-9

आज्ञा पालन

बच्चे, बूढ़े, युवा सबकी इच्छा होती है कि वे जो चाहते हैं, दूसरे वही करें। कभी यह सब वे प्यार से विनय के रूप में कहते हैं, कभी रूठकर और कभी डाँट-डपट कर। इसका अर्थ यह नहीं है कि ये सब आदेश देते हैं। आदेश देने का अधिकार बड़ों को होता है, छोटों को नहीं, आखिर ऐसा क्यों? आज्ञाएँ क्यों दी जाती हैं? आज्ञाओं के पीछे उद्देश्य क्या हैं?

बड़ों के पास, सयानों, बुजुर्गों, माता-पिता और गुरुजनों के पास जीवन का अनुभव तो होता ही है, पात्र के भविष्य की चिन्ता भी होती है। वे उसे पक्का घड़ा बनाना चाहते हैं। पक्का घड़ा बनने के लिए कच्चे घड़े को तपना पड़ता है और यह तपना ही आज्ञा-पालन है। आज्ञा वस्तुतः संस्कार की शिक्षा और मानसिक रूप से परिपक्व बनाने की कला है, जिसे माता-पिता और गुरु अपना प्राथमिक कर्तव्य समझते हैं। इसीलिए माता-पिता और गुरु की आज्ञा बिना किसी संकोच और न-नुकर के बिना मानने की परंपरा है। इसके पीछे यह सोच है कि ये बालक का कभी अहित सोच ही नहीं सकते, और यदि कभी उनकी आज्ञा मानने से अहित हो भी गया तो पहले आज्ञापालक उसमें अपनी त्रुटि, असावधानी, बेमन अथवा पटुता में कमी का परिणाम मान लेता है और दूसरे उस अहित में भी भविष्य में महान हित की भावना निहित मानकर अधीरता और उद्वेग से मुक्त रहता है।

आज्ञा-पालन जीवन की पाठशाला का वह पाठ है, जो अबोध को सुबोध और कर्महीन को कर्मवीर बनाता है। आज्ञा सीख नहीं है, शिक्षित होने के सोपान हैं। इनमें आज्ञापालक का भविष्य, स्वार्थ और शिव निहित है, आज्ञा देने वाले का किंचित् भी स्वार्थ नहीं।

प्रेरक प्रसंग

- वास्तविक विद्या तो गुरु की सेवा, सान्निध्य और कृपा से ही प्राप्त होती है। प्राचीन काल में महर्षि आचार्य धौम्य का बड़ा प्रसिद्ध आश्रम था। आरुणि उसी आश्रम में अन्य शिष्यों के साथ विद्यार्जन करता था। आश्रमों में ब्रह्मचारी ही सारा काम स्वयं किया करते थे। एक दिन वर्षा ऋतु में संध्या समय अचानक वेग से वर्षा होने लगी। महर्षि ने आरुणि से कहा, 'बेटा, जाकर देखो कहीं जल खेत की मेड़ तोड़ कर न निकल जाए।'

  आरुणि खेत पर पहुँचा। उसने देखा एक स्थान पर खेत की मेड़ टूट चुकी है और पानी बहता जा रहा था। आरुणि जितनी मिट्टी डालता, पानी उसे बहा ले जाता था। उसने बहुत प्रयास किया, पर उसे सफलता न मिली। थक कर वह स्वयं वहीं मेड़ पर लेट गया। उसके शरीर से रुककर जल का बहना बंद हो गया।

  ठंड के कारण आरुणि का सारा शरीर अकड़ गया। उसका मस्तिष्क भी सुन्न हो गया। वह अचेत हो गया।

  सायंकाल हवनादि के बाद महर्षि ने पूछा-'आरुणि कहाँ है?' शिष्यों ने बताया 'भगवन्! लगता है वह खेत

से अभी तक लौटा ही नहीं है।' महर्षि चिंतित हो उठे। रात्रि गहरी हो चुकी थी। वर्षा रुक गई थी।

उसी समय प्रकाश की व्यवस्था कर महर्षि अन्य शिष्यों के साथ खेत पर गए। उन्होंने चारों ओर खोज की और पुकारा। तभी एक दूर कोने से धीमा स्वर सुनाई दिया–'भगवन् मैं यहाँ हूँ।' उसकी वाणी में कम्पन तथा शिथिलता थी।

महर्षि वहाँ गए। उन्होंने देखा आरुणि मेड़ पर लेटा पड़ा है। उसका शरीर मिट्टी से सना और अकड़ा पड़ा है। उन्होंने उसे प्यार से उठाया और आश्रम में ले आए। ऋषि धौम्य ने आग जलवा कर उसे तपाया और स्वस्थ होने पर सबके साथ भोजन करवाया।

प्रात: काल सभी शिष्यों के सामने आचार्य धौम्य ने कहा,'वत्स, मेड़ को भङ्ग करके उठने से तुम आज से उद्दालक कहलाओगे और सम्पूर्ण श्रुतियों का ज्ञान तुम्हें स्वत: हो जाएगा।' बस उसी समय से आरुणि ऋषि उद्दालक बन गए। यह सब उनकी गुरु–भक्ति, गुरु–सेवा, आज्ञापालन और दृढ़संकल्प का ही परिणाम था।

- भारतीय इतिहास में श्रीराम का चारित्र आदर्श है। माता–पिता एवं गुरुजनों के प्रति उनमें असीम सम्मान का भाव था। श्रीराम जी के गुण एवं शील पर सभी नगरवासी तथा स्वयं दशरथ जी प्रसन्न थे। उन्हें जब युवराज–पद देने की तैयारी की जाने लगी तो सम्पूर्ण अयोध्या में आनन्द और उत्साह छा गया, पर श्रीराम ने कहा–'एकसाथ जन्में, एकसाथ पले और बड़े हुए, एकसाथ खेले और पढ़े, पर हमारे इस विमल वंश में यह कैसी रीति है कि एक भाई को गद्दी मिले!' वे सभी भाईयों के सुख–सुविधा की बात भी सदैव सोचते थे।

  राज्य–भङ्ग के अवसर पर जिस धीरता, मातृपितृ भक्ति, आज्ञापालन, सत्यप्रियता और श्रेष्ठ धर्म का जो अद्वितीय एवं अनुकरणीय उदाहरण श्री राम ने प्रस्तुत किया, वह संसार में अन्यत्र दुर्लभ है। उनके पिता दशरथ ने यद्यपि उन्हें अपने मुख से कभी भी वन जाने का आदेश नहीं दिया। पर श्रीराम पूज्य पिता का वचन निभाने, कैकेई की रुचि रखने और भाई भरत को राजा बनाने के लिए स्वयं तत्परता से वन जाने को उद्यत हुए।

  श्रीराम की पितृ भक्ति अद्भुत थी। अपने पूज्य पिता के वचनों को पूर्ण करने के लिए उन्होंने अयोध्या का सारा ऐश्वर्य, सुख–वैभव त्याग कर सतत्, चौदह वर्षों तक जंगलों की खाक छानना स्वीकार किया और विलाप करती हुई माता कौशल्या से कहा–''मैं आपके चरणों में सिर टेक कर प्रणाम करता हूँ। मुझे वन जाने की आज्ञा दो माँ। पिता के वचनों की रक्षा करना हर बालक का धर्म है।''

  इसी प्रकार उन्होंने लक्ष्मण से कहा–''पिता प्रत्यक्ष देवता हैं। उन्होंने किसी भी कारणवश वचन दिया हो, हमें उसका विचार नहीं करना है। मैं तो निश्चय ही पिता के वचनों का पालन करुँगा।''

  महाकवि तुलसीदास ने रामचरित मानस में लिखा है कि वनवास की सूचना पाने पर भी श्रीराम के मुखमंडल पर किसी भी तरह की चिंता दिखाई न दी, लोग उनके मुख की दिव्य आभा देखते ही रह गए। राम ने स्वयं को भाग्यशाली समझा और कहा–

'सुन जननी! सोइ सुतु बड़भागी, जो पितृ मातृ वचन अनुरागी।
तनय मातु पितु तोष निहारा, दुर्लभ जननी सकल संसारा।।'

पूज्य पिता की आज्ञा, सत्य और धर्म की रक्षा के लिए युवराज-पद को ठुकराते हुए श्रीराम सबकुछ त्यागकर पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ 14 वर्ष के लिए वन को चले जाते हैं। स्वजनों का आर्तनाद, प्रजा का गंभीर शोक भी उन्हें कर्त्तव्य-पथ से विचलित नहीं कर पाता।

श्रीराम का वन गमन यह बताता है कि जीवन भोग के लिए नहीं, अपितु त्याग के लिए है। आत्मा का सुख सबसे बड़ा सुख है। वह सुख माता-पिता की सेवा, कर्तव्यपालन और आज्ञापालन में निहित है।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए

1. हमें किन-किन व्यक्तियों की आज्ञा का पालन करना चाहिए।
2. आज्ञाकारी बनने से हम में कौन-कौन से गुण आ जाते हैं?
3. आरुणि ने अपने गुरु की आज्ञपालन करने के लिए क्या कार्य किया था?
4. आरुणि के प्रसंग को पढ़कर उसके चारित्र से उजागर होने वाले गुणों को लिखिए।
5. 'श्रीराम की पितृभक्ति अद्‌भुत थी।' उदाहरण देकर समझाइए।
6. आत्मा का सुख सबसे बड़ा सुख क्यों माना गया है?

प्रायोजना कार्य

1. 'आज्ञा पालन' से संबंधित कुछ अन्य प्रसंग अपने साथियों का सुनाइए और सुनिए।
2. अपने माता-पिता की आज्ञा पालन करते समय आपको किस प्रकार का अनुभव होता है? अपने साथियों से चर्चा कीजिए।

परिशिष्ट- (क)

स्वयं को जानें :

1. मेरा नाम : .....
2. माता का नाम : .....
3. पिता का नाम : .....
4. कक्षा : .....
5. मेरी तीन अच्छाइयाँ / शक्तियाँ : 1. ..... 2. ..... 3. .....
6. मेरी तीन कमजोरियाँ : 1. ..... 2. ..... 3. .....
7. मेरी तीन रुचियाँ : 1. ..... 2. ..... 3. .....
8. मुख्य तीन बातें जिनसे मैं खुश नहीं हूँ : 1. ..... 2. ..... 3. .....
9. मुख्य तीन कार्य जिनसे मुझे संतुष्टि मिलती है : 1. ..... 2. ..... 3. .....
10. ऐसे कौन से तीन कार्य हैं जो कि मैं अभी नहीं कर रहा/ रही हूँ, लेकिन यदि मैं करता/ करती तो अत्यधिक सन्तुष्टि की अनुभूति मिलती। : 1. ..... 2. ..... 3. .....
11. तीन महत्वपूर्ण दायित्व जो कि मैं जीवन में निभाता/ निभाती हूँ। : 1. ..... 2. ..... 3. .....
12. मेरे जीवन का ध्येय यह है कि मैं : .....

दिनाँक :

नाम एवं हस्ताक्षर : .....

परिशिष्ट- (ख)

स्व-परीक्षण
(ईमानदारी)

1.	आप बस में बिना टिकट यात्रा करते हैं?	हाँ/नहीं
2.	आप उपस्थिति लगवाने के बाद शाला से भाग जाते हैं?	हाँ/नहीं
3.	आप झूठी बीमारी का प्रार्थना-पत्र देकर अवकाश लेते हैं?	हाँ/नहीं
4.	आप घर का काम दूसरे की कॉपी से नकल करके दिखाते हैं?	हाँ/नहीं
5.	आप पी.टी. और बागवानी के कालांश में चोट का बहाना कर खाली बैठे रहते हैं?	हाँ/नहीं
6.	आप खेल में जीतने के लिए बेईमानी करते हैं?	हाँ/नहीं
7.	आप पिताजी को अध्यापक द्वारा बुलाए जाने की सूचना घर जाकर देते हैं?	हाँ/नहीं
8.	आप स्कूल में पाई वस्तु को अपने पास रख लेते हैं?	हाँ/नहीं
9.	आपने किसी लड़के की वस्तु चुराई है?	हाँ/नहीं
10.	आप चॉक जेब में डालकर घर ले जाते हैं?	हाँ/नहीं
11.	आप परीक्षा में नकल करते हैं?	हाँ/नहीं
12.	आप प्रगति-पत्र पर पिता के हस्ताक्षर स्वयं कर देते हैं?	हाँ/नहीं
13.	कोई आपको गलती से अधिक पैसे देता है तो क्या आप रख लेते हैं?	हाँ/नहीं

नोट : इसी प्रकार पाठ्यक्रम में समाहित प्रत्येक गुण पर पृथक्-पृथक् स्व-परीक्षण कर अपने विषय में जानें।

विशेष

1. पाठ्यक्रम-आधारित नैतिक गुणों का कक्षा-स्तरानुरूप क्रियाकलाप/प्रेरक प्रसंग/नाटक/सांकेतिक अभिनय तथा प्रायोजना (प्रोजेक्ट) आदि माध्यमों से शिक्षण-कार्य सम्पादित किया जाए ताकि विद्यार्थियों में नैतिक गुणों को अन्तर्निहित किया जा सके।
2. नैतिक शिक्षा शिक्षण के लिए पुस्तक में दिए नैतिक गुणों के अतिरिक्त अन्य गुणों का समावेश शिक्षक स्वयं अपने स्वाध्याय एवं चिन्तन के आधार पर कर सकते हैं।
3. अन्य विषयों के शिक्षण के दौरान नैतिक गुणों को सन्निहित कर शिक्षण कार्य किया जाए।